अँधेरे-उजाले के जादूगर

वी. के. मूर्ति से बातचीत

फिल्मों में वी. के. मूर्ति के कैरियर की शुरुआत एक वॉयलिन वादक के रूप में हुई। हालाँकि उन्होंने फोटोग्राफी की तालीम पाई थी। लेकिन बाद के सालों में वे एक उम्दा कैमरामैन के रूप में जाने जाने लगे। उन्होंने खासतौर पर गुरुदत्त की फिल्मों में कैमरे के जो कमाल दिखाए उसकी जितनी तारीफ हो कम है – प्यासा, साहिब, बीबी और गुलाम, कागज़ के फूल...।

इसी कमाल के लिए बीती 21 जनवरी को वी. के. मूर्ति को दादा साहिब फालके पुरस्कार से नवाज़ने की घोषणा हुई है। वे पहले सिनेमैटोग्राफर हैं जिन्हें यह पुरस्कार मिल रहा है।

वी. के. मूर्ति से गुरुदत्त, लाइट, कैमरा, संगीत, टेक्नॉलॉजी पर हुई बातचीत के सम्पादित अंशः

2005 में एम्सटरडम में लाइफ लाइम अचीवमेंट अवार्ड लेते वी. के. मूर्ति

गुरुदत्त से आपकी पहली मुलाकात कब और कैसे हुई?

उन दिनों मैं फेमस स्टूडियो में सहायक कैमरामैन के रूप में काम कर रहा था। देव आनन्द के भाई चेतन आनन्द वहाँ शूटिंग कर रहे थे। मैं अक्सर एक आदमी को वहाँ आते-जाते देखता था। एक दिन मैंने देव आनन्द से उनके बारे में पूछ ही लिया। वे बोले, "उनका नाम गुरुदत्त है। वे निर्देशक हैं और एक फिल्म बना रहे हैं।" मैंने कहा कि लगते तो हीरो जैसे हैं। खैर, फिर *बाज़ी* की शूटिंग शुरू हो गई। मैं इसमें सहायक कैमरामैन था। एक दिन हुआ यह कि गुरुदत्त एक गाने के एक हिस्से की शूटिंग कर रहे थे। उस हिस्से में बहुत ज़्यादा संगीत था। वे सोच रहे थे कि कैसे सारे संगीत को कैमरे में कैद किया जाए। मैंने कहा कि क्यों न हम वहाँ रखे बड़े आइने का इस्तेमाल करें। इससे लगेगा कि वहाँ बहुत हलचल हो रही है। हम कैमरे को आइने पर रखेंगे। वहाँ देव आनन्द की छवि दिखेगी। जैसे-जैसे, देव आनन्द नाच की ओर बढ़ेंगे मैं कैमरे को घुमाने लगूँगा। कैमरा तब तक उनके पीछे रहेगा जब तक वे कुर्सी पर नहीं बैठ जाते। फिर कुछ झिझकते हुए मैंने गुरुदत्त से पूछा कि क्या मैं यह सीन शूट कर सकता हूँ। जिसे उन्होंने और हमारे कैमरामैन दोनों ने मान लिया। मैंने वो सीन शूट किया। मैं जानता था कि गुरुदत्त बड़े जल्दी झल्ला जाते हैं। इसलिए मैंने उनसे कहा कि देखो गुरुदत्त मैं इस सीन के 3-4 टेक लूँगा। और इनमें से जो भी मुझे सबसे बेहतर लगेगा उसे ही तुम्हें फाइनल मानना होगा। और, ऐसा हुआ भी। शूटिंग पैक करने के बाद शाम को जब हम बाहर खड़े थे गुरुदत्त ने मुझसे कहा, "मेरे अगली फिल्म के कैमरामैन तुम ही होगे।"

क्या गुरुदत्त दूसरे निर्देशकों से अलग थे?

बेशक। दूसरे निर्देशक आमतौर पर कैमरामैन पर ही निर्भर रहते हैं। ज़्यादा से ज़्यादा वे क्लोज़-अप लेने को कह देते थे। या दो-तीन फिक्स्ड-शॉट्स के बाद ट्रॉली सीन के लिए कह देते थे। पर, गुरुदत्त ऐसे न थे। उन्हें बड़े क्लोज़-अप पसन्द थे, और बहुत हलचल – वे औरों से बहुत अलग थे।

गुरुदत्त के साथ काम करते हुए क्या कुछ चुनौतियाँ पेश आईं?

जैसा कि मैंने बताया गुरुदत्त क्लोज़-अप पसन्द करते थे और 75 मि. मी. का लेंस इस्तेमाल करते थे। साथ ही वे यह भी चाहते थे कि कैमरा किसी एक ही चीज़ पर टिका न रहे। उन दिनों 75 मि. मी. लेंस से इस तरह के शॉट लेना बहुत मुश्किल हुआ करता था। पर, मैंने इसे पूरी तरह से निभाया।

क्या गुरुदत्त के कैरियर पर आपका कोई प्रभाव पड़ा?

कागज़ के फूल में गुरुदत्त, कैमरामैन वी. रात्रा और वी. के मूर्ति

क्यों नहीं! एक तरह से मैंने ही उन्हें अभिनेता बनने के लिए उकसाया। जब हम *जाल* की शूटिंग कर रहे थे तो मैंने उनसे एक शॉट देने को कहा। उन्होंने दिया भी। छोटा-सा रोल था वो एक मछुआरे का। स्क्रीन पर खुद को देख उन्हें मेरी बात पर यकीन आया। गुरुदत्त ने फिल्मों में अपना सफर डॉस-डायरेक्टर के रूप में शुरू किया। उस वक्त वे देव आनन्द और दो अन्य दोस्तों के साथ एक कमरे में रहा करते थे। इनमें से केवल गुरुदत्त ही तनख्वाह पाते थे। उनके बीच करार था कि जिस किसी को भी पहले सफलता मिलेगी वह बाकी तीनों को मौका देगा। इसीलिए जब देव आनन्द ने अपनी कम्पनी खोली उन्होंने गुरुदत्त को उसमें काम दिया।

"जाने वो कैसे लोग थे जिनको प्यार से प्यार मिला..." *प्यासा* के इस गाने को क्लोज़-अप में शूट किया है लेकिन कैमरा है कि लगातार घूम रहा है। और फ्रेम में बहुत से लोग दिखाई दे रहे हैं। आप इसे कैसे कर पाए?

इस सीन में गुरुदत्त एक लाइब्रेरीनुमा कमरे के एक कोने में खड़े हैं। यहाँ खड़ा होना बता रहा है कि वे वहाँ बुलाए नहीं गए हैं। वे तो वहाँ काम करने वाले एक मामूली-से नौकर हैं। इस सीन में मैंने कैमरे को गाने की रिद्म के साथ घुमाया है। इसमें मुझे मेरी संगीत शिक्षा से बड़ी मदद मिली। मैं जानता था कि कब कैमरा रोकना है और कहाँ शॉट खत्म करना है।

क्या रात में आउट डोर शूटिंग करने वाले आप पहले व्यक्ति थे? इसमें काफी मुश्किल आई होंगी?

पता नहीं कि ऐसा करने वाला मैं पहला व्यक्ति था कि नहीं। पर हाँ, उस वक्त ऐसा करना कोई आम बात न थी। *प्यासा* की कहानी एक निराश कवि की थी जो रात में गंगा घाट पर अकेला बैठा रहता था। इसलिए जब गुरुदत्त ने कहा कि इसे हम स्टूडियो में नहीं बाहर ही फिल्माएँगे तो मैंने कहा, "बिलकुल।" और हमने कर भी दिखाया। इससे पहले हुआ यह था कि मैं *आरज़ू* फिल्म में सहायक कैमरामैन की हैसियत से काम कर रहा था। फिल्म की शूटिंग महाबलेश्वर में हो रही थी। लेकिन किसी वजह से हीरो-हीरोइन सेट पर 12 बजे से पहले नहीं आ पाते थे। हम सभी इन्तज़ार करते रह जाते। अब महाबलेश्वर जैसी पहाड़ी जगह के साथ दिक्कत यह थी कि वहाँ आमतौर पर सुबह से 1-2 बजे तक ही शूटिंग हो सकती थी। उसके बाद बादल आ जाते थे। सुबह के वक्त खूबसूरत कोहरा बिखरा रहता। मुझे कुछ अँग्रेज़ी फिल्में याद आईं जिनमें कोहरे के बड़े सुन्दर दृश्य थे। मैं भी कोहरे में शूट करना चाहता था। लेकिन न डायरेक्टर ने और न कैमरामैन ने मेरी बात को तवज्जो दी। कहा कि धूप के बिना शूटिंग कैसे होगी? लेकिन मैंने भी हार न मानी। सुबह-सवेरे दो-तीन लड़कों को साथ लेकर मैंने कोहरे में ही शूटिंग की। बम्बई पहुँचकर मैंने इस फिल्म को डेवलप किया और निर्देशक-कैमरामैन फली मिस्त्री को दिखाया। उन्होंने कहा, "बहुत-बहुत बढ़िया मूर्ति। बहुत सुन्दर शॉट हैं।"

फिल्म *आरपार* बनाते समय गुरुदत्त मुझसे अक्सर कहा करते थे कि मूर्ति मैं तुम्हारे लिए एक फिल्म बनाऊँगा। वो फिल्म थी – *कागज़ के फूल*। *कागज़ के फूल* में गुरुदत्त को स्टूडियो में आती धूप इतनी अच्छी लगी कि फिल्म में उसे उन्होंने कई दफा इस्तेमाल किया है।

***प्यासा* में आपने कोहरे का बहुत इस्तेमाल किया है।**

हाँ, खासतौर पर उस गाने में – "सर जो तेरा चकराए या दिल डूबा जाए।" मैं दिखाना चाहता था कि सुबह का वक्त है। लोग आ-जा रहे हैं और धीरे-धीरे कोहरे में खोते जा रहे हैं।

गुरुदत्त के साथ आपने जितनी फिल्में की हैं उनमें उन्होंने अभिनय भी किया है। वहाँ वे कैमरे के पीछे नहीं आगे हुआ करते थे। इसलिए उन्होंने सब कुछ पूरी तरह से आप पर छोड़ दिया था।

हाँ, बिलकुल। लेकिन वे मुझे कैमरे के एंगल और बोले जा रहे डायलॉग के

बारे में बताते जाते थे। उनकी फिल्मों में उर्दू काफी हुआ करती थी इसलिए मुझे कई बार पता नहीं चल पाता था कि कब कहाँ गड़बड़ हुई है। यही वजह है कि मैं कई दफा दो-तीन टेक ले लेता था। वे पूछते ऐसा क्यों तो मैं कहता कि चेहरे पर भाव सही नहीं थे।

आपने अपनी फिल्मों में लाइट को लेकर भी काफी कमाल किया है। इसके बारे में कुछ कहेंगे?

अकसर शूटिंग के बाद गुरुदत्त और मैं देर तक बातें करते रहते थे। उन दिनों *कागज़ के फूल* की शूटिंग चल रही थी। आपको मालूम ही होगा कि इसकी शूटिंग स्टूडियो में हुई थी। एक दिन छत के करीब बने रोशनदान से आती धूप की किरण पर मेरी नज़र पड़ी। इसमें उड़ते धूल के कण साफ नज़र आ रहे थे। मैंने गुरुदत्त से कहा, "कितना खूबसूरत लग रहा है, है ना।" वे बोले, "मैं तुम्हें दस दिन का समय देता हूँ। मुझे इस फिल्म में ऐसा ही दृश्य चाहिए।"

उस वक्त मैंने सोचा था कि मैं एक बड़ी स्पॉटलाइट लगाकर सूरज की किरण दिखा दूँगा। पर वो लाइट किरणों की तरह एक जगह पर न गिरकर फैल-सी रही थी। अब क्या किया जाए? मैं धूप में बैठकर सोच रहा था कि मेरी नज़र मेकअप मैन पर पड़ी जो शीशे से दीवार पर चिलका मार रहा था। मैंने कहा, "हटाओ सब को। मैं धूप और शीशे से यह कमाल कर दिखाऊँगा।" मैंने 4-4 फुट ऊँचे दो शीशे मँगवाए। एक शीशे को हमने छत पर रखा ताकि धूप को स्टूडियो में लाया जा सके। दूसरे शीशे को इस तरह रखा कि उस पर गिर रहे पहले शीशे के प्रतिबिम्ब को मैं अपनी मर्ज़ी से किसी भी चीज़ पर डाल सकूँ। पूरा शॉट एक घंटे में ले लिया गया। जाने-माने कैमरामैन फरदून इरानी इस फिल्म को देखने के बाद बोले कि मूर्ति मैंने आज तक ऐसे सुन्दर इफेक्ट नहीं देखे हैं। उस समय तक किसी ने भी स्टूडियो में धूप का इस्तेमाल नहीं किया था। हॉलीवुड की फिल्मों तक में भी नहीं।

गुरुदत्त के स्टूडियो का क्या हुआ?

अगर कहानी की माँग होती तो मैं हीरोइन को सुन्दर दिखाने के लिए अतिरिक्त डिफ्यूज़र का इस्तेमाल नहीं करता था। जैसे *प्यासा* के इस सीन को लें। कलकत्ता में गंगा किनारे शूट किए गए इस सीन में मुझे चाँद को जितना एक्पोज़र देना ज़रूरी लगा उतना ही दिया। वहीदा के लिए अतिरिक्त डिफ्यूज़र इस्तेमाल नहीं किया।

उसे तोड़ना पड़ा क्योंकि वहाँ से एक हाइवे (अली यावर जंग रोड) गुज़रना था। अब तो उसका नामोंनिशान तक नहीं है। उस स्टूडियो में आउटडोर शूटिंग के लिए बगीचे, पेड़ सब कुछ था।

***कागज़ के फूल* में क्या कोई ऐसा भी सीन था जिसमें कैमरे को चलाते हुए दिखाया गया था?**

हाँ। एक सीन था जिसमें गुरुदत्त शूटिंग क्रेन पर बैठे निर्देशन कर रहे हैं। उनके साथ कैमरामैन और मैं हूँ। इतने में वहीदा रहमान गलती से चलते हुए कैमरे के सामने आ जाती हैं।

और, *कागज़ के फूल* के अन्त में...

इस फिल्म का अन्त भी स्टूडियो में ही होता है। बुज़ुर्ग गुरुदत्त वापस लौटने के बाद खाली स्टूडियो में रखी कुर्सी पर नींद में ही चल बसते हैं। सुबह जब दरवाज़ा खुलता है तो वे धूप की उसी किरण में पड़े मिलते हैं।

...और एक दिन सचमुच उनके साथ भी कुछ ऐसा ही हुआ...

इतना कह मूर्ति साहब फूट-फूट कर रो दिए और उन्होंने टेपरिकॉर्डर बन्द करने को कह दिया

(यह इंटरव्यू दिसम्बर 99 में रक्स मीडिया कलेक्टिव और सी के मुरलीधरन ने किया था। साभारः सेमिनार)

एक दिन मैंने गुरुदत्त से कहा, "आपके शॉट मुझे बहुत अच्छे लगते हैं।"
वे बोले, "और मुझे आपकी लाइटिंग।"